**ओ३म्**

**“अनन्त ब्रह्माण्ड में अल्प बिन्दुवत् जीवात्मा नामी अभिमानी मनुष्य”**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 हम जिस संसार में रहते हैं उसमें हमारे समान अनन्त जीवात्मायें हैं जो विभिन्न प्राणी शरीरों में रह रहीं हैं। इन सब प्राणियों को इन योनियों में इस ब्रह्माण्ड के स्वामी अनन्त परमेश्वर से कर्म करने के लिए जन्म वा शरीर मिले हैं। सब अपनी अपनी मति व स्वभाव के अनुसार कर्म करते हैं जिनका परिणाम बन्धन व मोक्ष दोनों ओर प्रवृत्ति के रूप में होता है। यदि बन्धन में डालने वाले सभी कर्म समाप्त हो जायें तो फिर वह मनुष्य मोक्ष आदि प्राप्ति के लिए कर्म करेगा और मोक्ष की वैदिक वा शास्त्रीय अर्हता प्राप्त होने पर उसको मोक्ष मिलना सम्भव हो सकता है। हम मनुष्य हैं और हमारा शरीर लगभग 6 फीट लम्बा है। हमारे से कुछ कम व कुछ अधिक परिमाण वाले अनन्त मनुष्य इस पूरे ब्रह्माण्ड में विभिन्न लोक लोकान्तरों में विद्यमान हैं। इतने अनन्त जीव व उनके शरीर होने पर भी संसार खुला खुला ही दृष्टिगोचर होता है। ब्रह्माण्ड की विशालता पर विचार करें तो एक सामान्य मनुष्य की तरह हमें यह ब्रह्माण्ड इतना विशाल व अनन्त अनुभव होता है कि जिसकी विशालता का पूरा पूरा अनुमान हम व अन्य मनुष्य भी नहीं लगा सकते। कारण यह है कि इन्द्रियों व मन आदि करणों की सामर्थ्य सीमित है। शायद हम सब अनन्त गुण व सामर्थ्य युक्त परमात्मा और उसकी यह अनन्त परिमाण वाली कृति ब्रह्माण्ड की ठीक से कल्पना भी नहीं कर सकते।

 इस ब्रह्माण्ड की एक इकाई एक सौर मण्डल को मान सकते हैं। सार्य मण्डल में एक सूर्य व अनेक ग्रह व उपग्रह होते हैं। हमारे सौर मण्डल में भी एक सूर्य, लगभग 8 या 9 ग्रह और ग्रहों के भी भिन्न भिन्न संख्या में उपग्रह हैं। पृथिवी ही इतना बड़ा ग्रह है कि मनुष्य इस पूरी पृथिवी पर अपने पूरे जीवनकाल में भी भ्रमण भी नहीं कर सकता। अतः असंख्य सूर्य व असंख्य व अनन्त ग्रहों व उपग्रहों वाले इस ब्रह्माण्ड की विशालता की कल्पना बुद्धि में ठीक से समझ में नहीं आती है। आर्यसमाज का एक भजन हमें बहुत प्रिय लगता था व अब भी लगता है। इसके बोल हैं **‘तेरा पार किसी ने भी पाया नहीं, दृष्टि किसी की तू आया नहीं, तेरा पार किसी ने भी पाया नहीं।’ इसमें यह भी शब्द है कि ईश्वर ‘मात-पिता-सुत जाया नहीं।’** यह पंक्तियां यहां पर सटीक बैठती हैं। यह आश्चर्य की बात है कि हमारे आज के आधुनिक वैज्ञानिक इस ब्रह्माण्ड की विशालता से धार्मिक लोगों से कहीं अधिक विज्ञ व परिचित हैं और यह भी मानते हैं कि यह सृष्टि सदा से बनी नहीं है, करोड़ों व अरबों वर्ष पूर्व बनी हैं, इसका उपादान कारण जड़ परमाणु हैं, इस पर भी वह इसे एक चेतन सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान ईश्वर की कृति नहीं मान पा रहे हैं। हमें वैज्ञानिक सहित ऐसे सभी लोगों को जो ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास नहीं रखते, आश्चर्य होता है। जहां विधान है वहां विधायक अवश्य होता है, रचना जहां हो वहां रचयिता के अस्तित्व को भी अस्वीकार नहीं कर सकते, रचना विशेष को देखकर रचयिता का ज्ञान होता है, इसी सिद्धान्त से ईश्वर का अस्तित्व सिद्ध होता है। यह भी सिद्धान्त हम भुला देते हैं कि गुणों का प्रत्यक्ष होता है गुणी का नहीं। गुण सदैव गुणी के आश्रय से ही रहते हैं। अतः सृष्टि में सर्वज्ञता, सृष्टि की रचना, पालन व प्रलय आदि के गुण प्रत्यक्ष व अनुमान से भी अनुभव होते हैं तो इनका गुणी तो ईश्वर ही सिद्ध होता है। अतः कोई माने व न माने, यदि ईश्वर है तो रहेगा ही, किसी वैज्ञानिक व विद्वान के मानने न मानने से उसके अस्तित्व का अभाव नहीं होगा। विज्ञान को आज लगभग 250-300 वर्ष पुराना ही माने तो आने वाली एक, दो तीन शती बाद विज्ञान ईश्वर के अस्तित्व को मानेगा भी और दर्शनों के अनुसार वेद प्रमाण को स्वीकार कर, पूर्ण सम्भव है, स्वीकार भी करेगा और प्रचार भी करेगा।

 वैदिक धर्म पूर्ण धर्म व आचार शास्त्र है जिसमें मनुष्य के सभी कर्तव्यों व अकर्तव्यों का ज्ञान दिया गया है। वेदों में सृष्टि उत्पत्ति का भी वर्णन है जिसका विस्तार दर्शन आदि ग्रन्थों में हुआ है। वेदों व दर्शन के अनुसार संसार में ईश्वर, जीव व प्रकृति का अस्तित्व है। यह तीनों शाश्वत व नित्य पदार्थ हैं। ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वव्यापक, अनन्त, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, शुद्ध, पवित्र, अनादि, नित्य, अजन्मा, अमर, अविनाशी सत्ता है। यह संख्या में एक है। यह स्वयंभू सत्ता है। दूसरी सत्ता भी चेतन सत्ता है जिसे जीव कहते हैं। यह जीव ईश्वर की तरह सूक्ष्म, ईश्वर सर्वातिसूक्ष्म है, एकदेशी, ससीम व बाल के अग्रभाग के भी दस हजारवें भाग के बराबर है। यह भी अनादि, अमर, अविनाशी, जन्म-मरण धर्मा, पाप पुण्य रूपी कर्मों को करने वाला, बन्धन व मोक्ष के बीच फंसा हुआ है। जीव संख्या में अनन्त हैं। सृष्टि काल में सबका ईश्वर के द्वारा कर्मानुसार जन्म होता है, मृत्यु होती है, कुछ का वैदिक जीवन व्यतीत करने से व पापों के क्षय होने पर मोक्ष भी सम्भव होता है। इस प्रकार का यह जीव है। तीसरा पदार्थ व सत्ता सूक्ष्म प्रकृति है जो सत्व, रज व तम गुणों वाली प्रकृति की साम्यवस्था कहलाती है। इसी से यह दृश्य जगत विकार को प्राप्त होकर व स्थूल होकर बना है। इसकी रचना करने वाला सर्वशक्तिमान परमेश्वर है। जीवात्मा को जन्म मिलना ईश्वर के न्याय गुण पर अवलम्बित है। जीवात्मा का कल्याण भी ईश्वर की शरण में जाकर उसकी स्तुति, प्रार्थना व उपासना करने से ही होता है। ईश्वर ने सृष्टि के आरम्भ सभी मनुष्यों के कल्याणार्थ वेद ज्ञान भी दिया था। वह वेद ज्ञान आज भी विद्यमान है और आशा है कि सृष्टि की प्रलय होने तक रहेगा। लगभग 200 व कुछ अधिक वर्ष पूर्व यह विलुप्ति के कागार पर था तो ईश्वर ऋषि दयानन्द जी को भेजते हैं और वेदों की रक्षा होती है। उनकी कृपा से आज एक सामान्य व्यक्ति भी ईश्वर प्रदत्त वेद ज्ञान से परिचित हो सकता है। उन्होंने हिन्दी में वेद भाष्य करके एक क्रान्तिकारी कार्य किया था जो अनुमानतः सृष्टि के आदि काल से ऋषि दयानन्द के समय तक किसी ने भी नहीं किया था। ईश्वर, जीव व प्रकृति तत्वों की सिद्धि वेद व वैदिक साहित्य के आधार पर तो होती ही है, तर्क व युक्ति से भी इन्हें सिद्ध किया जा सकता हैं और सभी शंकाओं का उत्तर भी दिया जा सकता है।

 इस लेख का हमारा तात्पर्य केवल यह जानना है कि यह विशाल व अनन्त संसार ईश्वर की रचना है। वही हमारा आदर्श है और हमारे लिए माता, पिता, आचार्य, राजा व न्यायाधीश से भी कहीं अधिक बढ़कर है। हमें उसके स्वरूप व सभी गुणों को जानने का प्रयत्न करना चाहिये और उन गुणों से उसकी स्तुति, प्रार्थना ओर उपासना करनी चाहिये। ऐसा करके ही हमारी शुभ कर्मों की ओर प्रवृत्ति बढ़ेगी, हम पापों से मुक्त हो सकते हैं और इसका परिणाम हमारी आत्मा की उन्नति व मोक्ष की यात्रा का शुभारम्भ होना हो सकता है। संसार के अनेक गुप्त रहस्यों को जानने के लिए हम सत्यार्थप्रकाश सहित ऋग्वदेदिभाष्यभूमिका, वेदभाष्य व ऋषि दयानन्द के सभी ग्रन्थों को पढ़ने का आग्रह करेंगे। इससे हमें इलहोक व परलोक दोनों में लाभ होगा, हमारी सदगति व उन्नति होना निश्चित है। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**

**ओ३म्**

**“स्वामी श्रद्धानन्द जी के लिखित उपदेशों का उत्तम**

 **कोटि का एक नया वृहद प्रकाशन धर्मोपदेश मंजरी”**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 मनुष्य जैसा सोचता है वह वैसा ही बन जाता है। अच्छे शुद्ध व पवित्र चिन्तन के लिए उसके मन में सात्विक व आध्यात्मिक विचारों का होना आत्मा व शारीरिक उन्नति के लिए आवश्यक है। अच्छे विचारों का सबसे सरल माध्यम ऋषियों व उच्च कोटि के तपस्वी विद्वानों के धार्मिक व सामाजिक विषयों के ग्रन्थों का अध्ययन है। हम वेदादि अनेक ग्रन्थों का उनके भाष्यकारों के माध्यम से अध्ययन करते हैं तो अनेक स्थान ऐसे भी आते हैं जो कठिन व जटिल होने से पूर्णतः समझ में नहीं आते हैं। यदि उन कठिन स्थलों पर हमें किसी उच्च कोटि के विद्वान का सरल भाष्य व टीका मिल जाये तो हम उस कठिन स्थल को भी आसानी से समझ सकते हैं। एक समय था जब हम आर्यसमाज में नये नये थे। विद्वानों के प्रवचनों में हमें आनन्द आता था क्योंकि इनका अधिकांश भाग हम समझने में सफल होते थे। फिर स्वाध्याय की रूचि उत्पन्न हुई। पुस्तकें पढ़ने लगे परन्तु वैदिक वांग्मय का ज्ञान न होने के कारण हमें पुस्तकों का बहुत सा भाग समझ में नहीं आता था। स्वाध्याय बढ़ता रहा और फिर ऐसा भी हुआ कि हम अधिकांश बातों को समझने लगे। यही विशेषता हमें स्वाध्याय का सबसे बड़ा लाभ प्रतीत होती है। पुस्तकों का स्वाध्याय करने के लिए हमें कहीं बाहर जाना नहीं होता। डाक से घर पर ही कोई भी ग्रन्थ पहुंच जाता है। हमें उसे पढ़ना मात्र होता है। जैसे जैसे हमारा स्वाध्याय बढ़ता जाता है, कठिन से कठिन विषय भी सरलता से समझ में आने लगते हैं। स्वाध्याय की आदत बन जाने पर मन में दिन में अनेक बार स्वाध्याय किये जाने वाले विषय से सम्बन्धित विचार हमारे मन व आत्मा में भर जाते हैं और मन उन्हीं के चिन्तन में तत्पर रहता है जिससे मन व आत्मा को तो लाभ होता ही है शारीरिक चेष्टायें भी प्रायः स्वाध्याय किये हुए विषय के अनुरूप होती हैं जिससे जीवन लाभान्वित होता है।

 पिछले दिनों हमें डा. विनोदचन्द्र विद्यालंकार जी से ज्ञात हुआ कि उनके द्वारा सम्पादित स्वामी श्रद्धानन्द जी की लेखनी से प्रसूत उपदेशों का एक संकलन **‘धर्मोपेदेश मंजरी’** उनके सम्पादन में प्रकाशित हुआ है और वह एक प्रति हमें प्रेषित करा रहे हैं। यह सुनकर हमारा प्रसन्न होना स्वाभाविक था। नये प्रकाशन का नाम सुन कर और वह भी स्वामी श्रद्धानन्द जी के द्वारा प्रदत्त उपदेशों को प्राप्त होने की सूचना निश्चय ही प्रसन्नतादायक थी। एक दो दिन बाद पुस्तक भी हमें प्राप्त हो गई। पुस्तक आते ही हमने उसे खोला ओर उसमें सम्पादकीय भूमिका को पढ़ डाला। पुस्तक की भूमिका में पुस्तक विषयक अनेक तथ्यों वा रहस्यों का उद्घाटन होता है। भूमिका पढ़कर पुस्तक की विषय वस्तु व सम्पादक जी के विचारों का ज्ञान हो जाता है। अतः हम पुस्तक को आरम्भ से ही पढ़ते हैं और उसकी प्रत्येक बात को देखने का प्रयास करते हैं। विचारणीय नया प्रकाशन धर्मोदेश-मंजरी महात्मा मुंशीराम/स्वामी श्रद्धानन्द की लेखनी से निःसृत उपदेशों का संकलन है। इनके संकलनकर्ता श्री लब्भूराम नैय्यड़ है तथा इसका वर्तमान प्रकाशन डॉ. विनोदचन्द्र विद्यालंकार जी के द्वारा सम्पादित होकर श्री घूडमल प्रहलादकुमार आर्य धर्मार्थ न्यास, हिण्डोन सिटी-322230 से हुआ है। यह पुस्तक प्रकाशक के अतिरिक्त दिल्ली के दो स्थानों से भी प्राप्त की जा सकती है जिनमें से एक हैं श्री ऋषिदेवजी, आर्यसमाज न्यू मुलतान नगर, ब्लाक-सी-107-108, नई दिल्ली-1100056, चलभाष 9818704609। इस पुस्तक का प्रकाशन महर्षि दयानन्द बोध दिवस, सन् 2017 को हुआ पुस्तक में छपा है। पुस्तक का मूल्य 150 रूपये है। पुस्तक प्रकाशन में दो दानी परिवारों ने प्रकाशक महोदय को पच्चीस-पच्चीस हजार की आर्थिक सहायता प्रदान की है जिनका सचित्र वर्णन भी पुस्तक में प्रकाशित है। पुस्तक के पृष्ठ 5 से 15 तक सम्पादक महोदय द्वारा लिखा गया **‘उपोद्घात’** है जिसमें पुस्तक में प्रकाशित सामग्री का विस्तृत परिचय दिया गया है। उपोद्घात के प्रथम अनेक पृष्ठों में स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन के प्रमुख पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है। इसके बाद नये संकलन का विवरण दिया गया है जिसमें इस ग्रन्थ के पूर्व प्रकाशनों की जानकारी भी दी गई और है। पूर्व प्रकाशनों में जो जो सुधार सम्पादक महोदय ने किये हैं उसका विवरण दिया गया है। सबसे महत्वपूर्ण बात हमें यह लगी कि इसमें ‘मुक्ति का एक पथ’ नाम से एक नया अध्याय जोड़ा गया था जिसमें ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के चयनित 14 मंत्रों पर स्वामी श्रद्धानन्द जी के 13 प्रवचन दिये गये हैं। पहले यह ग्रन्थ मुक्ति सोपान नाम से सन् 1925 में प्रकाशित हुआ था। मुक्ति सोपान में दिये गये यह 13 प्रवचन पहले तीन अवसरों पर धर्मोपेदेश नाम से प्रकाशित इस ग्रन्थ के किसी संस्करण में नहीं थे। पूर्व प्रकाशित धर्मोपेदश ग्रन्थ में मन्त्रों व श्लोकों में आये कुछ व कई शब्दों के छूट गये अर्थ भी दे दिये गये हैं व कुछ अन्य कमियों व त्रुटियों को भी दूर किया गया है। पुस्तक का कागज व छपाई उत्तम है, पुस्तक का आवरण पेपर बाउण्ड है। पुस्तक की कितनी प्रतियां प्रकाशित की गई हैं, यह पुस्तक में देखने को नहीं मिला।

 पुस्तक में विषय क्रम इस प्रकार वर्णित हैं। उपोद्घात पृष्ठ 5 से 15 तक, प्रथम खण्ड : यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म पृष्ठ 18 से 86 तक, द्वितीय खण्ड : मानव-धर्म का आधार ब्रह्मचर्य पृष्ठ 87 से 150 तक, तृतीय खण्ड : दार्शनिक विचारधारा के परिप्रेक्ष्य में अध्यात्म-विद्या पृष्ठ 151 से 264 तक और चतुर्थ खण्ड : मुक्ति का एक पथ 265 से 300 पृष्ठ तक है। इसके बाद श्लोक/मन्त्र-अनुक्रमणिका (खण्ड क्रम से) 4 पृष्ठों में दी गई है।

 हम समझते हैं कि जब व्यक्ति किसी ग्रन्थ को पढ़ता है तो उसकी आत्मा का संबंध पुस्तक लेखक की आत्मा से जुड़ जाता है। भले ही पुस्तक लेखक जीवित न हो परन्तु जब उसने पुस्तक लिखी होती है तो उसके हाथों से लिखे गये विचार उसकी आत्मा से ही पुस्तक में आये होते हैं। पुस्तक के अध्ययन व स्वाध्याय को पाठकों का पुस्तक व ग्रन्थ लेखक की आत्मा के साथ योग वा सत्संग होना कह सकते हैं। इस पुस्तक को पढ़ने पर आपकी आत्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी की आत्मा से जुड़ेगी व उनकी आत्मा के ज्ञान व भावनाओं का आपकी आत्मा को ज्ञान होगा, ऐसा हम मानते हैं। यदि आप स्वामी श्रद्धानन्द जी से जुड़ना चाहते हैं तो इस ग्रन्थ को प्रकाशक से मंगा कर पढ़ सकते हैं। पूरी पुस्तक पढ़ने पर आपको निराशा नहीं होगी, आध्यात्मिक लाभ तो अवश्य होगा। इसी के साथ इस चर्चा को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**